तृतीय अध्याय

[illegible] की कहानियों में प्रतिबिम्बित मध्यवर्गीय जीवन —

तृतिय अध्याय

कमलेश्वर की कहानियों में प्रतिबिम्बित महानगरीय जीवन ---

बहुचर्चित कहानीकार कमलेश्वर ने हिन्दी के सशक्त हस्ताक्षर के रुप में अपनी पहचान स्थापित की है। हिन्दी कहानी साहित्य में नया आयाम देने वाली उनकी सभी कहानियाँ न केवल कमलेश्वर के बल्कि हिन्दी कथा साहित्य के महत्वपूर्ण अंकन हैं। उनका संपूर्ण कथा साहित्य पूर्ववर्ती कहानियों से अलग है। रोमानियत से निकलकर व्यष्टि और समष्टि के स्तर पर समाज और देश की स्थितियों और समस्याओं से उनकी हर कहानी जुड़ी हुयी है इस लिए उनकी सभी कहानियाँ `नयी कहानी` के दौर में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है।

कमलेश्वर की लग-भग सभी कहानियाँ महानगर और कस्बेसे संबंधित हैं। उन्होंने अपनी बहुतसी कहानियों में महानगरीय जीवन को सचित्र और सजीव रुप में चित्रित किया है। उनका कथाकार दिल्ली और बम्बई में बैठकर भी जिस महानगर को चित्रित करता है, उसमें कस्बे के जीवन मूल्य टूटने का बडा भारी दर्द है। `खोयी हुई दिशाएँ,` `दिल्ली में एक मौत`, `मांस का दरिया`, `जोखिम`, `पराया शहर` आदि उनकी कहानियाँ महानगरीय पृष्ठभूमिपर ऐसी कहानियाँ हैं, जो मूल्यों मे हुए परिवर्तन, संबंधों के थोथेपन, बेगाने पन, उब और एक रसता, महानगर की खिच-पिच और किट-किट को अभिव्यक्त करती है।

महानगर की भीड-भाड, भागम-भाग और शोर गुल महानगरीय जिन्दगी का एक अनिवार्य अंग बन गये हैं। इसी भागम-भाग जिन्दगी ने इन्सान को यांत्रिक बनाकर इन्सानीयत से दूर कर दिया है। इन सभी बातों का मनुष्य की जिन्दगी पर परिणाम होना अनिवार्य है। फिर भी मनुष्य महानगर की इस भीड-भाड और भागम-भाग वाली जिन्दगी को अपनाकर अपनी तथा अपने परिवार की उपजीविका के लिए महानगर का

आश्रय लेता है और उसका सीधा-साधा जीवन पूर्ण रुपसे महानगरीय बन जाता है।

कमलेश्वर की कहानियों में महानगरीय जीवन के विभिन्न रुप देखने को मिलते हैं। महानगरीय जीवन को देखने के लिए सर्वप्रथम हम वहाँ के परिवारों पर एक दृष्टि डालेंगे।

पारिवारिक जीवन --

ग्रामीण परिवारों की तुलना में नगरीय परिवारों में अन्तर देखा जा सकता है। गाँव में अधिकतर परिवार संयुक्त होते हैं तो नगरों में छोटे परिवारों की ओर अधिक प्रवृत्ति होती है। इसका कारण यह है कि, नगरों में बड़े-बड़े मकान सुलभ नहीं होते जिससे कि परिवार के सभी सदस्य एक साथ रह सकें। इसलिए यही अधिक अच्छा होता है कि, छोटे-छोटे परिवार अलग अलग रहे। नगरों में नौकरी धंन्धे के लिए आनेवाले व्यक्ति नगरों की महँगाई और मकानों के उँचे किराए के कारण अपनी स्त्री और बच्चों कोही अपने साथ ला पाते हैं और परिवार के बाकी सदस्य गाँव में ही छूट जाते हैं। इस प्रकार नगरों-महानगरों में अधिकतर छोटे परिवार ही दिखाई देंगे। संयुक्त परिवार के विघटन की यह प्रक्रिया गाँव की अपेक्षा नगरों में अधिक तेजीसे होती है, इसके उपरोक्त कारणों के अलावा अन्य कारण भी है जैसे व्यक्तिवाद, भोगवाद, स्वार्थ, स्वतंत्रता की इच्छा आदि। महानगरीय परिवार में नई पीढी के युवक-युवतियों में व्यक्तिवाद, स्वतंत्रता और उच्छृंखलता अधिक होती है। उनपर उनके माता-पिता का नियंत्रण कम रहता है। घर से दूर स्कूलों, कालिजों और विश्वविद्यालयों में पढने वाली लड़कियाँ और लड़के प्रातःकाल से संध्या समयतक महानगर की भीड़-भाड में खो जाते हैं। ऐसी परिस्थिति में यह स्वाभाविक है कि, उनपर घर का अनुशासन नहीं रहता। इस अनुशासन के अभाव में माता-पिता और बच्चों के संबंध घनिष्ठ न रहकर उनमें औपचारिकता आती है।

महानगरीय परिवारों में स्त्रियों की स्थिति उँची होती है, किन्तु उसमें समरसता का अभाव होता है। बहुतसे पढ़े-लिखे पति-पत्नी आपस में जितने अधिक मधुर संबंध बनाये रखते हैं, उतनाही उनके वैवाहिक संबंधों का विघटन बड़ी शीघ्रता से होता रहता है।

नगरीय परिवार की एक और विशेषता यह है कि, नगरीय परिवार में पिता के अलावा माता और बच्चों की सत्ता होती है। महानगर में ऐसे कई परिवार होते हैं, जिनमें पत्नी पति से अधिक कमाती है, अथवा वह पति से अधिक पढ़ी-लिखी या जबर्दस्त होती है। कुछ परिवारों में लड़के-लड़कियों की सत्ता चलती है और जैसा वे चाहते है माता-पिता वैसा ही करते हैं। ऐसी स्थिति में महानगरों में व्यक्तियों के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक आदि संबंधों में पारिवारिक संबंधों का हस्तक्षेप लगभग नहीं के बराबर होता है। महानगरीय परिवार के सदस्यों में व्यक्तिवाद अधिक होता है। उनका एक दूसरे से तादात्म्य न होने के कारण बहुदा परिवार उनके लिए एक होटल-सा लगता है, जहाँ वे खाना खाने और आराम करने आते हैं। इसलिए महानगर के पारिवारिक जीवन में परंपराओं, रीति-रिवाजों का कम महत्व होता है। नई पीढ़ी के लोग तो उन परंपराओं को बनाये रखने के स्थान पर उनको तोड़ने में ही अधिक विश्वास करते हैं। वे पुरानी रीति-रिवाज के विरुध्द विद्रोह करते हैं और अपने मनमाने ढंग से जीवन व्यतित करना चाहते हैं।

महानगरीय परिवार, कृत्रिमता, यांत्रिकता और भौतिकवाद के कारण प्रकृति के संपर्क से दिन-ब-दिन दूर होता जा रहा है। वैज्ञानिक उपकरणों, यंत्रों और धर्म-निरपेक्ष साहित्य के कारण धार्मिकता और आध्यात्मिकता नगरीय परिवारों में बहुत कम दिखाई पड़ती है।

इन सभी बातों से अन्त में हमें यह निष्कर्ष मिलता है कि, महानगरीय परिवारों पर सिनेमा, और पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव इतना अधिक है कि, उनकी अस्थिरता और विघटन की प्रक्रिया निरंतर बढ़ती ही जा रही है।

मैं ने कमलेश्वर जी की लगभग सभी महानगरीय कहानियाँ पढ़ी, लेकिन उनकी चार-पाँच कहानियों में ही महानगरीय परिवार चित्रित हुआ है। उनकी कहानियों में चित्रित परिवार `केन्द्रक` परिवार की श्रेणी में आते हैं। `जोखिम`, `आसक्ति`, `खोयी हुई दिशाएँ`, `दिल्ली में एक मौत`, `मांस का दरिया`, `दु:खों के रास्ते`, `एक थी विमला` और `एक रुकी हुयी जिन्दगी` इन कहानियों में चित्रित परिवारों में एक, दो या ज्यादा से ज्यादा तीन सदस्य हैं। महानगरीय परिवारों का समाज-

- शास्त्रीय दृष्टि से किया गया उपर्युक्त विवेचन कमलेश्वर की कहानियों के परिवारों पर इसी दृष्टि से लागू होगा ही ऐसी बात नहीं है। इसका कारण यह है कि, इनकी कहानी या कोई एक पात्र भी कहानी के विकास को अकेले चरम तक ले जाता है। उदाहरण के लिए 'जोखिम' कहानी का नायक, जो अपने छोटेसे शहर में अपनी बूढी माँ को छोड़कर बम्बई में आया है वह संपूर्ण कहानी में अपना परिवार नहीं बना पाया है। उसकी बेकारी और बम्बई जैसे महानगर में मकान या एक कमरा मिलने की मुश्किलों से वह भलिभाँति परिचित है, इस लिए वह अपनी बूढी माँ को साथ न लाकर अकेला ही यहाँ बम्बई में काम की तलाश करने के लिए दिन-रात घुमता रहता है। 'आसक्ति' में चित्रित परिवार में पहले दो ही सदस्य थे। विनोद और उसकी बहन सुजाता। वे दोनों महानगर दिल्ली में एक कमरे की छुटनभरी जिन्दगी जी रहे हैं। उपरसे दोनों के एक साथ रहने के कारण पास-पड़ोस के लोगों की धिनौनी बातें सुननी पड़ती हैं। बादमें सुजाता विरेन्द्र नाम के एक आदमी से शादी कर लेती है। वीरेन्द्र का कोई घर न होने के कारण वह भी सुजाता के कमरे में ही रहता है। अब इन तीनों के परिवार में विनोद ही एक ऐसा पात्र है, जो बेकार है और कुछ भी नहीं कमाता। अत: वह उन दोनों की सुविधानुसार जिन्दगी जीने की कोशिश करता है। विनोद की बेकारी सुजाता को खलती नहीं और सुजाता भी कभी उस पर आधिकार नहीं जताती, उपरसे उसका या उसकी जरुरतों का खयाल रखती है। लेकिन विनोद को लगता है कि यह कितने दिन चलेगा ? कहाँ तक बहन और बहनोई के आर्थिक आधारपर वह जीयेगा ? वह इस पारिवारिक संघर्ष और तनाव की वजह नहीं बनना चाहता। इस तरह बहन का प्रेम और स्वयं का निकम्मापन विनोद के पारिवारिक सुख में तुफान बनकर रहता है।

महानगर में छोट से छोटे परिवार भी तनावपूर्ण वातावरण में जीते हैं। महानगर की भीड और शोर भरी जिन्दगी में पारिवारिक एकता के अभाव का मार्मिक चित्रण आधुनिक कहानियों में हुयी है। टूटे हुये पारिवारिक मूल्यों को फिर से संजोकर सुखी परिवार के अपने देखने की कोशिश करने वाले बलराज की झटपटाहट, 'दु:खों के रास्ते' कहानी में अभिव्यक्त हुयी है। उसकी पत्नी ललिता बम्बई में नौकरी करती है और वह दिल्ली में। उन दोनों की नौकरीयाँ दो अलग-

- अलग महानगरों में होने के कारण उनके परिवार में एक तरह की दूरि पैदा होती है। उनके दो बच्चे बम्बई में ललिता के पास है, फिर भी ललिता वीरेन्द्र नाम के एक आदमी के साथ पति-पत्नी की तरह रहती है। बलराज को यह बात बहुत ही बुरी लगती है। वह ललिता को मनाने की उसे वीरेन्द्र से परावृत्त करने की हर तरह कोशिश करता है, लेकिन ललिता उसका अस्तित्व ही नहीं मानती। वह उसे नफरत ही करती है। उसके प्रति ललिता का विश्वास सदा के लिए मर गया था। उसका अपार दु:ख देखकर भी ललिता के मन में कोई परिवर्तन नहीं होता और उसका कमजोर मन उस वस्तुस्थिति को स्वीकार कर वापस दिल्ली लौट जाता है। इस प्रकार ललिता के मनमाने ढंग से जीवन व्यतित करने के कारण उनके परिवार का विघटन होता है,जो महानगरीय परिवारों पर पाश्चात्य संस्कृति के गहरे प्रभाव का द्योतक है।

महानगर के छोटे परिवार का एक और सुंदर उदाहरण `दिल्ली में एक मौत` कहानी में देखने को मिलता है। मिस्टर और मिसेज वासवानी इन दो सदस्यों के एक परिवार को छोड़कर सरदारजी,अतुल भवानी और कहानी का नायक ये सब एकही इमारत के अलग अलग कमरों में अकेले ही रहते हैं। महानगर दिल्ली में नौकरी धंन्धे के लिए आये हुये ये लोग, महानगर में मकानों के ऊँचे किराए और निरंतर बढती हुयी महँगाई के कारण एकही कमरे में अपने पूरे परिवार के साथ नहीं रह सकते, अत: अपने गाँव और परिवार से दूर अकेले रहना ही वे पसंद करते हैं। इन लोगों के अकेले रहने के उपर्युक्त कारणों के अलावा और भी कई कारण हो सकते है, जैसे स्वतंत्रता की इच्छा, व्यक्तिवाद, भोगवाद आदि। नगरीय परिवार के सदस्यों में व्यक्तिवाद और स्वार्थ अधिक होता है। उन्हे परिवार के बाकी सदस्य बोझ लगते हैं और वे परिवार से अलग होकर अकेले रहना पसंद करते हैं।

महानगर दिल्ली की पृष्ठभूमिपर लिखी गयी कहानी `एक थी विमला` में चार लडकियों के चार अलग अलग परिवार चित्रित हुये हैं। पहला परिवार विमला का है। उसका बाप किसी प्राइवेट फर्म में काम करता है,और अपने घर-परिवार का भार उठाये उम्र काट रहा है। विमला सुशील और समझदार है। वह अपने बाप की सस्ता हालत अच्छितरह जानती है। अपनी पढाई खत्म करने के बाद वह कहीं नौकरी करेगी,

घर के खर्चे में बाप का हाथ बँटायेगी और छोटे भाइयों को पढ़ायेगी। विमला के घर के आस-पास रहने वाले सभी लोग उसकी तारीफ करते हैं। अपने परिवार की खस्ता हालत और बाप के संघर्षसे परिचित विमला का यह परिवार,स्वार्थ,व्यक्तिवाद, स्वतंत्रता और कलह जैसे विघटन के कारणों से दूर होने के कारण सुख-दु:ख के अच्छे-बुरे दिन शान्ति से बीता रहा है।

दूसरे परिवार की कुन्ती भी बहुत सुशील और शालीन लड़की है। उसका बाप मनोहरलाल नौकरी करने के बावजूद घर का खर्चा पूरा कराने के लिए असमर्थ था। कुन्ती से बड़ा लड़का शादी के बाद घरसे अलग हो गया था, उसने अपने परिवार से संबंध तोड़ लिये थे। कुन्ती का बाप दिल का दौरा पड़ने से मर जाता है ,तब परिवार का सारा बोझ कुन्ती पर ही आ जाता है। वह इण्टर की पढ़ाई करते करते एक नर्सरी स्कूल में मास्टरनी की नौकरी करती है और अपने से छोटी बहन और तीन भाइयों की पढ़ाई का खर्चा उठा रही है। इस तरह उसने संघर्षों के बीच से गुजर कर भी अपने परिवार की इज्जत बचाए रखने की कोशिश कर कहीं भी अपने परिवार को विश्रृंखलित नहीं होने दिया है।

तीसरे परिवार की लज्जा उपर्युक्त दोनों लड़कियों से अलग है। वह किसी बड़े होटल में रिसेप्शनिस्ट है और परिवार की संपूर्ण सत्ता उसके हाथ में है। लज्जा देर रात तक बाहर रहती है और हमेशा कोई न कोई उसे कार से घर छोड़ने आता है। उसके इस तरह के व्यवहार से लोग उसे बदचलन कहते हुये उसके बारे में तरह-तरह की बातें करते हैं। इसी कारण लज्जा का परिवार घर में सब सुख-सुविधायें होने के बावजूद एक मानसिक दबाव के निचे जीता है। उसके परिवार के सभी लोग चारों की तरह वहाँ रहते हैं। इस प्रकार लज्जा के परिवार में सामाजिक नियंत्रण की शिथीलता के कारण उनके पारिवारिक संबंध भी औपचारिक हो गये हैं। चौथी लड़की सुनीता तलाक पीड़ित है और अपनी नौकरानी के साथ अकेली रहती है। तीन साल पहले उसने विनयमोहन से शादी की थी। सब कुछ खुश हाल था, लेकिन कभी-कभी एक दिन ऐसा आता कि सब कुछ बदल जाता और साथ रहना उसे जरुरत से ज्यादा मजबूरी लगती थी और वह पछताती थी। आखिर उन्होंने तलाक ले ली।

तब से वह अकेली ही रहती है। पहले तो उसे कोई आदमी न होने के कारण मकान ही नहीं मिल रहा था। तमाम मुश्किलों से उसे यह मकान मिला है, जिसमें वह छुटी-छुटी-सी रहती है। महानगरीय परिवारों में रोमांचक प्रेम पर आधारित विवाहों से उत्पन्न यह तलाक की समस्या, एक भयंकर अभिशाप बनकर रह गयी है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि, महानगरों में परिवार अब अस्थिर और स्थायी समिति नहीं रहा है और विवाह एक सामाजिक समझौता मात्र रह गया है, जिसको थोड़ीसी अनबन पर तोड़ा जा सकता है।

वास्तव में आधुनिक काल में महानगरीय परिवार एक संक्रमण काल से गुजर रहा है। इससे परिवारों के उद्देश्यों, आदर्शों और कार्यों में बड़ा परिवर्तन हुआ है।

सामाजिक जीवन --

महानगरों में परिस्थितियों की भिन्नता होने के कारण वहाँ का सामाजिक जीवन भी भिन्न-भिन्न पहलूओं में बँटा हुआ है। अत: हम यहाँ महानगर के उन सामाजिक पहलूओं की मुख्य विशेषताओं को देखेंगे।

सामाजिक संबंधों की निर्वैयक्तिकता --

महानगरीय जीवन के सामाजिक पहलू की सबसे बड़ी विशेषता सामाजिक संबंधों की निर्वैयक्तिकता है। इसका कारण यह है कि महानगर में लोग एक दूसरे के प्रति व्यक्ति के प्रमान नहीं बल्कि वस्तु के समान व्यवहार करते हैं। महानगरीय समाज और उसकी बहुविध विशेषताओं का विविध आयामों में सशक्त चित्रण कमलेश्वर ने अपनी आधुनिक महानगरीय कहानियों में किया है। 'उस रात वह मुझे ब्रीच कैण्डी पर मिली थी और ताज्जुब की बात यह है कि, दूसरी सुबह सूरज पश्चिम में निकला था' इस लंबे शिर्षक वाली कहानी में सामाजिक संबंधों की यह निर्वैयक्तिकता सुंदर ढंग से अभिव्यक्त हुयी है। बम्बई के ब्रीच कैण्डी के समुद्र किनारे आधी रात के समय एक आदमी और एक औरत बारिश में भीगते हुये एक बेंच पर बैठे हुये थे। तभी उनके सामने तीन नावें आकर रुक जाती हैं। नाववाले आदमी छ: थें और वे सँभालकर नाव से कुछ उतार रहे थें। शायद एक औरत की लाश थी।

लाश को और वह भी आधी रात के समय अपनी आँखो के सामने पाकर भी वे दोनों सामोश और शान्त थे। भय और दु:ख की एक भी रेखा उनके चेहरेपर नहीं थी। वे दोनों अपनी ही धून में मस्त, दुनिया से बेखबर थे। उनकी तटस्थता और निर्विकारता उनके मौन को बाँधे हुये थीं। इस निर्वैयक्तिकता के समान ही महानगर में आर्थिक व्यवहार की स्थिति है। महानगर में प्रत्येक वस्तु का मूल्य मुद्रा मे आँका जाता है। वहाँ लेन देन का कोई महत्व नहीं होता। महानगर में प्रत्येक व्यक्ति के व्यवहार में अपनेपन की कोई गुंजाईश नहीं होती। (`खोई हुयी दिशाएँ` का चंदर अनजान और बिन जान पहचान से भरी नगरी दिल्ली में अपनेपन के लिए तड़पता रहता है। किसी की आँखों में पहचान की एक झलक देखने को भी वह तरसता है। एक दिन वह कनौट प्लेस जाने के लिए बस स्टॉप पर खड़ा था कि एक फटफटवाला सरदार उसे पहचानता है। चंदर उसकी आँखों में पहचान देखते ही फौरन लपककर फटफटपर बैठ जाता है। दस मिन्टि बाद गुरुद्वारा रोड पर उतरकर एक चवन्नी सरदार की हथेलीपर रख देता है। चन्दर हमेशा चार आने देकर ही यहाँ तक आता था। लेकिन आज उसने दी हुयी चवन्नी देखतेही सरदार की आँखों की पहचान एकाएक गायब हो गयी। वह दो आने और माँगने लगा। तब चंदरने कहा `सरदार जी आपके फटफट पर ही बीसों बार चार आने देकर आया हूँ।`` किसी होर ने लिये होणगे चार आणे ... असी ते है आने तो घट नहीं लेन्दे बादशाहो।`[१]
इस बार सरदारजी पंजाबी में बोला और हथेली चंदर के सामने फैलायी। इस प्रकार महानगरों में मानव संबंध भी पैसे से खरीदे जाते हैं। रुपयों के आधार पर सब व्यवहार होता है, जिसमें व्यक्तियों का महत्व गौण होता है। महानगरों में दुकानदार से लेकर सवारीवालों तक को सिर्फ अपने धंधे से मतलब रह गया है। दिलचस्पी की बात उनके दिमाग में नहीं है। उन्हें जो अधिक दाम देगा वही ग्राहक पसन्द आयेगा। महानगर के बाजारों मे, दफ्तरों मे, पार्कों और सिनेमाघरों में, क्लबों और दुकानों में अधिकतर मनुष्य व्यक्ति न होकर एक भीड का सदस्य होता है। और इससे निर्वैयक्तिकता को प्रोत्साहन मिलता है। महानगर की यह सबसे बडी

---

१ कमलेश्वर - खोयी हुई दिशाएँ - पृ.५४।

विशेषता परिवार, जाति, बिरादरी और संपूर्ण समाज में दिन-ब-दिन बढ़ती ही जा रही है। 'पराया शहर' का दुर्गादयाल, जो अपने शहर में राजा की जिन्दगी जीता था और लोगों को अपनी उँगलीयों पर नचाता था, अपनी सस्ता हालत में मानसिक यातनाओं से परेशान हो गया था। उसे हर काम में साथ देनेवाले भी उससे दूर हो गये थे। बिरादरी के लोग उसकी घृणा कर रहें थे। अपनी इस जानलेवा परेशानी में वह एक दिन अपने बेटे को कहता है -- 'सब कुछ बीत गया। अब तो दो-दो, चार-चार पैसे के लिए लोग परायों की तरह पेश आते हैं, वहीं लोग जो अपने थे अब परेशान करते हैं। कोई साथ नहीं देता... दो पैसे की चीज देने से इनकार कर देते हैं ... इतना परायापन आ गया है अपनों में'[१] यह परायापन ही निर्वैयक्तिकता है। लोग सिर्फ अपने पैरों के निचे की जमिन देखते हैं। उन्हें अपने आस-पास रहने वाले लोगों के अस्तित्व का कोई ख्यालही नहीं होता। भौतिक सुखों के पिछे लगातार भागते रहने वाला व्यक्ति जब अपने परिवार तक का नियंत्रण नहीं मानता तब वह औरों की क्या सोचे ?

सामाजिक जीवन में यांत्रिकता --

सामाजिक संबंधों की निर्वैयक्तिकता, औद्योगीकरण तथा यंत्रीकरण के कारण महानगरों में सामाजिक जीवन यंत्रवत् बन जाता है। मनुष्य का हर काम घडी नामक यंत्र के जरिए चलता रहता है। महानगर की यांत्रिकता ही मनुष्य की दिनचर्या निर्धारित करती है। इस यांत्रिकता के कारण महानगरीय मनुष्य का मानवपन कहीं खो गया है और प्रत्येक व्यक्ति पर कोई न कोई लेबिल चिपकाया गया है। कोई डॉक्टर है, कोई प्रोफेसर है, कोई मरीज है, कोई सौदागर है, कोई अमीर है तो कोई गरीब है पर मनुष्य कोई नहीं है। बात यह है कि महानगर में व्यक्ति के जीवन की गति इतनी तीव्र होती है कि किसी को किसी की ओर देखने की फुर्सत ही नहीं होती। अत: उनके परस्पर संपर्क क्षणिक और अस्थायी होते है, जिससे मनुष्यों की नजर केवल उस मतलब पर होती है जो उन्हें एक दुसरे से साधना होता है। महानगरीय

---

१ कमलेश्वर - खोयी हुई दिशाएँ -- पराया शहर -- पृ.१४५-१४६।

जीवन का यह अभिशाप कमलेश्वर की कहानियों में विविध संदर्भों में चित्रित हुआ है। कमलेश्वर जी इलाहाबाद छोड़कर नौकरी के सिलसिले में जब दिल्ली आये तब उन्हें वहाँ एक बदली हुयी मन:स्थिति का अहसास हुआ। दिल्ली के नागरिक और सामाजिक जीवन में हर व्यक्ति का व्यवहार शिष्ट होते हुये भी खोखला और यंत्रवत् है। यह 'खोई हुयी दिशाएँ' कहानी संग्रह की भूमिका 'नई कहानी की बात' में उन्होंने इस प्रकार स्पष्ट किया है -- 'यहाँ एक नयी ही जिन्दगी थी, एक ऐसी जिन्दगी जिसके किनारे खड़े होकर देखने से बहाव का पता ही नहीं चलता था ... एक अजीब-सा परायापन और बेगानापन है यहाँ।'[१] पराये पन और बेगाने पन की यह पीडा व्यक्ति के व्यवहार और मानव संबंधों में प्रत्यक्षता का अभाव और स्वयं की महत्वकांक्षाओं, आशाओं में हमेशा लगे रहने के कारण उत्पन्न हो गयी है वह धीरे - धीरे उन सभी आदतों का गुलाम बन जाता है और वे आदतें उसकी मजबूरी नहीं नियती बन जाती है। 'खोयी हुई दिशाएँ' के चंदर का यही हाल है। दिल्ली में रहनेवाले प्रत्येक व्यक्ति का यंत्रपूर्ण व्यवहार देखते देखते वह स्वयं भी यंत्र का गुलाम बन जाता है। सबेरे आठ बजे एक प्याली कॉफी पीकर घरसे निकले हुये चन्दर को शाम तक पताही नहीं लगता कि उसने कुछ खाया है या नहीं। अपने दिमाग पर जोर डाले जब वह सोचने लगता है तब उसे अहसास भर होता है कि थोडी-थोडी भूख लग रही है। महानगर का यह यंत्रवत् सामाजिक जीवन व्यक्ति को पेट की भूख के लिए भी सोचने को मजबूर करता है। हजारों लोगों के बीच रहते और सैकडों व्यक्तिओं से रोज व्यवहार करते हुये भी महानगरीय व्यक्ति संबंधों की अप्रत्यक्षता बनाये रखता है। संपर्क की सापेक्षता और अस्थायित्व तथा क्षणभंगुरता के कारण महानगर में प्रगाढ संबंध बहुत कम विकसित हो पाते हैं। महानगर में दफ्तरों, डाकखानों और कारखानों में व्यक्ति-व्यक्ति के बीच होने वाले क्षणिक संपर्क का सुंदर उदाहरण 'खोयी हुई दिशाएँ' में दिया गया है। 'एक क्षण की जान-पहचान का सिलसिला सिर्फ पेन होगा जो कोई न कोई दो हरुफ लिखने के लिए माँगेगा और

---

१ कमलेश्वर - खोयी हुई दिशाएँ - की भूमिका - पृ.१२।

लिख चुकने के बाद अपना खत पढ़ते हुये वह बायें हाथ से उसे कलम लौटाकर शायद धीरे से थैंक्यू कहेगा और टिकिट वाले काउण्टर की ओर बढ़ जायेगा।` १

कमलेश्वर जी ने जितनी भी महानगरीय कहानियाँ लिखी हैं वे शत-प्रतिशत वहाँ की कशमकश और धूल-धक्कड़ भरी जिन्दगी को चित्रित कर सके हैं। `खोयी हुई दिशाएँ` उनके निजी जीवन की कहानी है, जिसका सारा परिवेश वे स्वयं जीये हैं। इस एक कहानी में ही हम महानगर की यांत्रिकता, अकेलापन, परायापन आदि समस्याओं के विविध आयाम देख सकते हैं। अतः हम यह कह सकते हैं कि महानगरीय व्यक्ति की यांत्रिकता, उसके पारिवारिक, सामाजिक जीवन पर पूरी तरह छायी हुयी है, और इसको प्रत्यक्ष करने वाली कहानी है, `खोयी हुई दिशाएँ`।

गतिशीलता --

नगरीय जीवन के सामाजिक पहलू की एक अन्य विशेषता है, गतिशीलता। गतिशीलता महानगरीय जीवन का एक अनिवार्य अंग बन गयी है। महानगर में यह गतिशीलता कई प्रकार की है। अपने घर से दूर काम करने वाले व्यक्तिको हर रोज सुबह और शाम को दौड़ करनी पड़ती है। कहीं कहीं तो दफ्तर पहुँचने में बाबू लोगों को दस मील साइकिल पर तय करना पड़ता है। काम से घूमने के अलावा कुछ लोग व्यर्थ, कुछ लोग काम की तलाश में, कुछ लोग सामान बेचने के लिए तो कुछ लोग केवल मनोरंजन के लिए घूमते रहते हैं। यह घूमना रात को कुछ घण्टों के लिए ही कम होता है। दिल्ली जैसे बड़े नगर में यह चोबिस घण्टे लगातार शुरु होता है। मौसम कोई भी हो, सख्त सर्दी हो, तपती धूप हो या धुंवाधार बारिश हो। महानगरीय जीवन की इस गतिशीलता पर कोई फर्क नहीं पड़ता। ना वह कम होती है और ना ही उसमें रुकावट आता है। `दिल्ली में एक मौत` कहानी में लेखक कमलेश्वर जी ने इसका सुंदर चित्र खिंचा है। `कुहरे में बसें दौड़ रही हैं घूँ-घूँ करती भारी टायरों की आवाजें दूर से नजदीक आती हैं और फिर दूर होती जाती हैं। मोटर, रिक्शे बेतहाशा भागे चले जा रहें हैं। टैक्सी का मीटर अभी किसीने डाउन किया है।

---

१ कमलेश्वर `खोयी हुई दिशाएँ - `खोयी हुई दिशाएँ - पृ.४५।

BABR. BALASAHEB KHARDEKAR LIBRARY SHIVAJI UNIVERSITY

पड़ोस के डॉक्टर के यहाँ फ़ोन की घण्टी बज रही है और पिछवाड़े गली से गुजरती हुई कुछ लड़कियाँ सुबह की शिफ्ट पर जा रही हैं। सख्त सर्दी है। सड़कें ठिठुरी हुई हैं और कोहरे के बादलों को चीरती हुई कारें और बसें हॉर्न बजाती हुई भाग रही हैं। सड़कों और पटरियोंपर भीड़ है पर कुहरे में लिपटा हुआ हर आदमी भटकती हुई रूह की तरह लग रहा है।'[१] यह स्थिति सिर्फ दिल्ली में ही नहीं, कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, आदि बड़े नगरों के साथ साथ कानपुर, पुना आदि नगरों में भी आय हो गयी है। गतिशीलता बढ़ने के साथ साथ महानगरों में दुर्घटनाओं की संख्या भी बढ़ती जाती है। खास तौर पर कलकत्ता, जैसे महानगर में रोजाना दो-चार दुर्घटनाएँ हो जाना अब मामुली बात हो गयी है। महानगर बम्बई के परिवेश में लिखी गयी कहानी 'अपना एकांत' में कमलेश्वर जी ने स्थानायक सोम की दुर्घटना का संकेत देकर इस बात को पुष्टी दी है।

महानगर की इस गतिशीलता से सामाजिक संबंधोंपर भी प्रभाव पड़ता है। इससे संबंधों की निर्वैयक्तिकता बढ़ती है और सामाजिक एवं व्यक्तिगत विघटन भी बढ़ता है। लेकिन, नगर का आकार, प्रकार और वहाँ की परिस्थिति व्यक्ति को यह गतिशीलता अपनाकर ही जीवन जीने को मजबूर कर देती है।

पड़ोसीपन की कमी --

जो नगर, उसका आकार और लोकसंख्या में जितना बड़ा होगा, उसमें पड़ोसीपन की भावना उतनी ही कम दिखलाई पड़ेगी। अधिकतर लोग सुबह ही अपने कामपर निकल जाते हैं और शाम को थके-मांदे घर लौटते हैं। अत: काफी लोगों को इतनी फुर्सतही नहीं मिलती कि वे पड़ोसी का हालचाल पूछें। कभी कभी एक ही मकान में अनेक परिवार रहते हैं या घर बहुत पास-पास होते हैं। इससे निजत्व 'प्राइवेसी' बनाये रखना कठिन हो जाता है। ऐसी दशा में पड़ोसियों से घनिष्ठता न बढ़ावा ही अच्छा रहता है क्योंकि फिर चाहे जैसे रहने में कोई कठिनाई नहीं रहती। 'खोयी हुई दिशाएँ' का चंदर दिन भर की थकान से परेशान होकर जब घर जाने की

---

१ कमलेश्वर 'खोयी हुई दिशाएँ - दिल्ली में एक मौत' - पृ.८३-८४।

सोचना है तब उसे कुछ राहत-सी मिलती है। घर जाकर वह अपनी पत्नी से प्यार करेगा, और पत्नी को बाहों में लेकर दिन भर की थकावट पलभर के लिए भूल जायेगा। लेकिन उसकी सोच के अनुसार यह सब नहीं होगा क्योंकि, उनके पड़ोस में रहने वाले गुप्ताजी की पत्नी हमेशा की तरह बेकारी में बैठी गप लड़ा रही होंगी या स्वेटर की बुनाई सीखने के लिए निर्मला को तंग कर रही होगी। उसके आने के बाद भी मिसेज गुप्ता नहीं जायेगी, लेकिन खाने की बात सुनकर शायद वह जाने को उठेगी। इस तरह चन्दर उसके अपने घर में भी खुलकर हँस नहीं सकता और अपनी पत्नी के साथ प्रेम के दो-चार पल भी नहीं बीता सकता। ऐसा करने के लिए उसको सभी खिड़कियों के पर्दे खिसकाने पड़ेंगे और चोर की तरह सारा व्यवहार करना पड़ेगा।

इसके अलावा महानगर में यातायात और संदेशवहन के साधन अधिक सुलभ होने के कारण अधिकतर लोग कहीं भी अपने मित्र बना लेते हैं और उनको पड़ोसियों से घनिष्ठता बढ़ाने की जरूरत नहीं पड़ती। यदि पड़ोसी से रुचि मिल गई तो फिर मेल जोल बढ़ जाता है, वरना वर्षों पास-पास मकानों में रहकर भी लोग एक दूसरे से कोई सरोकार नहीं रखते। महानगर में कुछ परिवार ऐसे होते हैं जो स्वयं को उच्च, सुशील समझते हैं और पड़ोस में रहने वाले अगर निम्नजाति के अथवा गरीब हैं, उनसे संबंध रखना या उन संबंधों को बढ़ाना हीन समझते हैं। वे हमेशा अपने पड़ोसियों से कतराते और दूर रहने की कोशिश करते हैं, ताकि इस तरह की नौबत से स्वयं का परिवार और उसकी हज्जत को बचाये रखे। अत: हम यह कहेंगे कि महानगर में पड़ोसीपन की कमी है ही, इससे भी कुछ आगे जाकर अगर यह कहा जाये कि महानगर में पड़ोसीपन की भावना का -हास हो गया है और यह एक सापेक्ष तथ्य है। तो कोई अनुचित नहीं लगा के अतिरिक्त और भी कुछ ऐसी विशेषताएँ हैं, जिनका संकेत कमलेश्वरजी की महानगरीय कहानियों में नहीं मिलता। उदाहरण के लिए अगर हम देखे तो संघर्ष उनकी बहुतसी कहानियों में हमने देखा है। यह संघर्ष, व्यक्ति के जीवन में स्थैर्य, मानसिक तृप्ति के लिए और बेकारी जैसी बातों के खिलाफ मनुष्य द्वारा किया गया संघर्ष है। जैसे `जोखिम', `आसक्ति', `एक रुकी हुई जिन्दगी', `मांस का दरिया' आदि कहानियों में यह संघर्ष हम देख चुके हैं।

लेकिन महानगर में एक और संघर्ष और प्रतिद्वंद्विता अधिक मात्रा में होती है। यह संघर्ष गुंडों ,कारखानदारों,व्यापारियों और राजनीतिक नेताओं में भी होता है। इस तरह की स्थिति के जिम्मेदार वे लोग होते हैं जो गलाकाट प्रतियोगिता में हमेशा जूटे होते हैं। इस तरह की अनेक विद्रोह वाली बातें प्रथम महानगरों में ही शुरु होती हैं और वहीं पलती है। जुलूस और हड़तालों के नामपर किये जाने वाले भयानक विद्रोह का सुंदर चित्रण ' लाश ' कहानी में हुआ है। कहानी में वर्णित शहर में भारी हड़ताल हो गयी थी, और लाखों लोगों ने जुलूस में भाग लिया था। यह हड़ताल सरकार के खिलाफ विरोधी दल के नेताओं द्वारा किया गया था,जो कि सरकार के अच्छे संबंधी हैं। हड़ताल का नेतृत्व करनेवाले विरोधी दल के नेता कांतिलाल और मुख्यमंत्री अच्छे दोस्त हैं। इस लिए मुख्यमंत्री के जुलूस में होने वाले विध्वंस या नुकसान की कोई चिंता नहीं है। अत: वे निश्चित थें। शहर की सड़कोंपर मोर्चा बड़ी शान से जा रहा था कि एकाएक जुलूस के अगले हिस्से में भगदड मच गयी और जुलूस एक अंधे युध्द में बदल गया। तोड फोड की आवाजों और घबराहट भरी चीखों में गोलियों की तड़तडाहट से संपूर्ण वातावरण व्याप्त हो गया। बहुत बडा हादसा हुआ पर उसमें सिर्फ एक लाश गिरी थी। यह लाश उस सामान्य व्यक्ति की थी जिसका कोई संबंध उनके राजनीतिक दाँवपेचों से नहीं था।

इस तरह परस्पर विरोधी इच्छाएँ और प्रवृत्तियाँ ही महानगर में असंतोष और सामाजिक संघर्ष को पनपने देती है।

कमलेश्वर जी की महानगरीय कहानियों में महानगर की जिन विशेषताओं का चित्रण लग भग न के बराबर है वे प्रमुख रुप से दिखावा और फैशन है। महानगर के सामाजिक जीवन में दिखावे का महत्व इतना अधिक होता है कि कभी-कभी तो उपभोग का लक्ष्य उपभोग न होकर दिखावा मात्र रह जाता है। लोगों की रहन-सहन,वेश-भूषा,बाहरी तडक-भडक ,सजावट आदि पर इतना जोर दिया जाता है कि बहुधा ये आन्तरिक विकास में बाधा उत्पन्न करते हैं। धनिक लोग अपनी

हैसियत का विज्ञापन करने के लिए आलीशान बंगले और नई नई कारें अपने पास रखते हैं। मध्य और निम्न वर्गीय लोग अपनी कम आय होने के बावजूद धनिकों की नकल करते हैं। दिखावे का यह जोर शायद इस लिए भी होता है कि उससे इज्जत मिलें। इस प्रवृत्ति के कारण महानगर में फैशन का भी महत्व होता है। फिल्मी अभिनेता-अभिनेत्रियाँ तथा नेतागण आदि फैशन के प्रतिमान निश्चित करते हैं और महानगर के युवक-युवति, बालों के कट, वेशभूषा, सिगरेट पीने का ढंग और बोलचाल आदि में ये प्रतिमान अपनाकर हू-ब-हू उनकी नकल करते हैं। भारत में बम्बई और दिल्ली आदि महानगरों में स्त्री और पुरुष फैशन में अग्रणी समझे जाते हैं। फिर भी भारतीय नगरों महानगरों में फैशन का यह रुख पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव मात्र है।

अंत में हम यह कहेंगे कि उपर्युक्त सभी विशेषताओं से महानगरीय सामाजिक जीवन परिपूर्ण होता है।

महानगरीय जीवन : होटल, क्लब, सिनेमा आदि

होटल, क्लब, सिनेमा, कफे-हाउस, बार और नाइट क्लब आदि महानगरीय जीवन के अनिवार्य अंग ही हैं। आधुनिक कहानीकारों ने जीवन के इस पक्ष को भी अपनी कहानी में उतारा है। इस अत्याधुनिक जीवन-पध्दति को स्वीकारने वाले 'मौडर्न' लोग तो इसे अपनी संस्कृति मानते हैं और इसे भरपूर रूप में जीते हैं। कमलेश्वर जी ने अपनी महानगरीय कहानियों में ऐसे स्थानों की चर्चा बहुत कम की है। उनकी एक कहानी 'खोयी हुई दिशाएँ' में वर्णित होटल 'गे-लौर्ड' का अपवाद छोड़कर बाकी सभी महानगरीय कहानियों के पात्र होटल, क्लब, बार आदि में अपने को अनुपयुक्त पाते हैं,। ऐसी बात नहीं है कि वे इनसे घबराते हैं अथवा उनके मनमें ऐसे स्थानों के प्रति घृणा-भाव है बल्कि उनके जीवन की आर्थिक विवशता, उनके घर-परिवारों की संपूर्ण जिम्मेदारियाँ, काम-धन्धे के पिछे उनकी लगातार भागमभाग और मीलों लंबे रेत के मैदान की तरह लंबी बेकार जिन्दगी, उन्हें ऐसे स्थानों से दूर रहने को मजबूर कर देती है। महानगर का यह रंगीन जीवन उनकी जिन्दगी से मेल

नहीं खा पाता। क्योंकि उनकी जिन्दगी कष्ट और यातनाओंसे भरी हुई है। उनकी यह स्थिति ही आज के महानगरीय जीवन का यथार्थ है। `बयान`, `जोखिम`, `आसक्ति`, `अपना एकांत`, `अजनबी`, `एक रुकी हुई जिन्दगी` और `मांस का दरिया` आदि कहानियों के पात्र ही महानगरीय जीवन की इस स्थिति को व्याख्यायित करते है। `बयान` का फोटोग्राफर, `जोखिम` का `मैं`, `आसक्ति` का विनोद, `अपना एकांत` का सोम, `अजनबी` का अजनबी, `एक रुकी हुई जिन्दगी` का चमन और `मांस का दरिया` की वेश्या जुगनू आदि सभी पात्र महानगर के एक ऐसे परिवेश में जीते हैं, जहाँ विसंगति और विरुपता के सिवाय कुछ भी नहीं है। और शायद इसी लिए कहानीकार ने इन पात्रों को विरुप देने की कहीं भी कोशिश नहीं की है। अनायास ही उनकी कहानियाँ होटल, क्लब, सिनेमा आदि की चकाचौंध से दूर और सभ्य की धुरी पर घूमती सामान्य सच्चाइयों की ओर बढती गयी। `खोयी हुई दिशाएँ` इस एकोक्ती कहानी में लेखक ने एक होटल, या कहें टी-हाऊस का थोडासा खुलकर बल्कि शत्-प्रतिशत् सच्चा चित्रण किया है। कथानायक चन्दर जिस होटल में जाता है उस में बेपनाह शोर है। खोखली हँसी के ठहाके है और हर आदमी के चेहरेपर अजीब-सा बेगानपन है। डिनर हान्स की प्रतिक्षा में बैठे प्रत्येक आदमी की आँखों की कृत्रिम चमक और वहाँ काम करने वालों का यंत्रवत् व्यवहार देखकर चन्दर इस भीड में भी स्वयं को अकेला महसूस करता है। और उसके साथ मेज पर बैठा अनजान दोस्त जब उसे पूछता है -- `आप ... आप तो शायद वॉमर्स मिनिस्ट्री में हैं। मुझे याद पडता है कि ...`[१] सुनकर चन्दर का पूरा शरीर झनझना उठता है। जिसकी पलभर की पहचाने भी उसे सहारा मिला था, उसके यह पूछने से चन्दर का मन छिन्न भिन्न हो जाता है। और दिनभर की थकान दूर करने आया चन्दर तब दुगनी थकान महसूस करता हुआ वहाँ से चल पडता है। क्दाचित् यह स्थिति, लेखक ने उन दाणों की उपज है जब वे इस परिवेश से ऊबे हुये है या फिर उन्होंने अपनी आँखों से देखी हुई है।

---

१ कमलेश्वर - खोयी हुई दिशाएँ - खोयी हुई दिशाएँ -- पृ.५० ।

आर्थिक जीवन --

आजादी के बाद भारत में हुए औद्योगिकरण से महानगरों में केवल औद्योगिक प्रगति ही हुई हो ऐसी बात नहीं है। अपने गाँव,कस्बे और छोटे शहरों को छोड़कर रोजी रोटी की तलाश और काफी सुविधाओं से भरा बेहतर जीवन जीने की आकांक्षा में अशिक्षित, अल्पशिक्षित और स्वशिक्षित नव-युवक बड़ी संख्या में महानगरों में आ बसे और इसी समय महानगरों में जनसंख्या की बेहिसाब वृध्दि हुई। औद्योगिक प्रगति के साथ साथ शिक्षा का प्रसार भी इस प्रक्रिया को और अधिक तेज करता रहा। इन सभी बातों का परिणाम यह हुआ कि महानगर,आकार,प्रकार और लोकसंख्या की घनता में बराबर बढता रहा। जैसे जैसे लोकसंख्या में बढोतरी हुई वैसे वैसे महंगाई भी अपने विकराल रुप में बढती रही। और आज, महानगर में यह महंगाई आर्थिक विवशता के नीचे दबे हुये व्यक्ति के जीवन की विडंबना बनी हुई है। बडे - बडे उद्योगपति,व्यापारी और राजनीतिक नेताओं के हाथ में आज महानगर की संपूर्ण अर्थव्यवस्था होने के कारण वे ही महानगर की चकाचौंध,सुख और ऐश्वर्य के समस्त साधन,कारें-स्कूटर,होटल,आलीशान कोठियाँ और बंगले आदि की खुशहाल जिन्दगी जीते हैं, लेकिन आम आदमी इस विषम अर्थव्यवस्था में अत्यंत त्रासदायक स्थितियों में जी रहा है। नौकरी पेशा व्यक्ति भी आज इस स्थिति से अधिक परेशान है। उसे मिलने वाली महिने भर की तनख्वाह,उसकी रोजी आवश्यकताएँ जुटाने में असमर्थ है। (महानगरीय जीवन के इस महत्वपूर्ण पक्ष को भी आधुनिक कहानीकारों ने अपना लक्ष्य बनाया है। कमलेश्वर जी की महानगरीय कहानियों में व्यक्ति के आर्थिक जीवन का विश्लेषण बारीकी से हुआ है। `बयान`, `जोखिम`, `आसक्ति`, `मांस का दरिया`, `एक रुकी हुई जिन्दगी` आदि कहानियों के पात्र आर्थिक तंगी में संघर्षमय जीवन बीताते हुये ही चित्रित हुये हैं। `बयान` का फोटोग्राफर कुर्सी और वोट की राजनीति में फँसी अर्थ व्यवस्था का शिकार बन जाता है। मानसिक सुख और सुविधाओं से भरा हुआ उसका जीवन,उसके नौकरी से हटा दिये जाने के बाद पूर्ण रुपसे विषाक्त बन जाता है। भ्रष्ट राजनीतिक व्यवस्था और नौकरशाही की अकर्मण्यता ने महानगरीय आर्थिक जीवन को विषम से विषमतर बना दिया है इस

बात का उदाहरण यह फोटोग्राफर और उसका परिवार है। घर की खस्ता हालत और उसकी प्रामाणिकता पर सरकार द्वारा किया गया अन्याय वह बर्दाश्त नहीं कर सका। उसने इस संघर्षपूर्ण आर्थिक और मनसिक परेशानियों से छुटकारा पाने के लिए आखिर आत्महत्या की। महानगर में यह स्थिति ईमानदारी से काम करने वाले हर व्यक्ति की है जो भ्रष्टाचार और गुंडागर्दी जैसे गलत कामों से दूर रहते हैं।

`जोखिम` का नायक (मैं) जिस प्रकार का आर्थिक जीवन जी रहा है, उसका कोई मंतव्य नहीं है। आर्थिक कष्ट की यातनायें उसके जीवन का अविभाज्य अंग बन गयी हैं। पाँच साल बम्बई में रहने के बाद भी उसके रहने का कोई ठिकाना नही हो सका। कोई नौकरी पाकर वह अपने अर्थिक कष्ट कम नहीं कर सका। बस्स। इज्जत, सुविधा और मानसिक तृप्ति की छटपटाहट,शुरु से लेकर अंत तक उसकी जिन्दगी को लहूलुहान करती रही। `ज्यादा खुशनसीब हैं वे औरतें, जो तनका धंधा करके कुछ कर लेती हैं। दुख-सुख की अच्छी-बुरी जिन्दगी जी लेती हैं। मेरे पास तो वह नहीं है। न दुख न सुख। सिर्फ एक ठहराव। कोई काम आठ-दस दिन से ज्यादा नहीं चलता। फिर वही। वही ठहराव। .....`[१] उसकी नाकाम, सीमित और बेकार जिन्दगी उसे इस तरह सोचने को मजबूर कर देती है। उसकी बूढी माँ, जो उसके छोटेसे शहर में है, इस आर्थिक मार और बढती महंगाई से अपने जीवन को दुर्वह भार समझ रही है। अपने बेटे से इस व्यथा-कथा का वर्णन करती हुई महंगाई और आर्थिक मार को इस प्रकार व्यक्त करती है --`उसने बताया था कि उम्र के साथ उसकी जरुरते और भूख घट रही थी,पर पता नहीं बाजार को क्या हो रहा था कि खर्चा बढता जाता था।`[२] इस तरह महानगर में हर सामान्य व्यक्ति महंगाई के सामने पैसे की क्रय-शक्ति के -हास की चिंता से व्यथित है।

सामान्य व्यक्ति द्वारा जीवन के हर क्षेत्र में आर्थिक मुहानों पर जो संघर्ष जारी है,उसका गहराई से चित्रण हुआ है `एक रुकी हुई जिन्दगी` में। इसी कहानी

---

१ कमलेश्वर - ब्यान - तथा अन्य कहानियाँ - जोखिम - पृ.८७।

२ कमलेश्वर - - वही ----- पृ.९०।

का चमन दिल्ली में घड़ियों की एक छोटी-सी दुकान चलता है। दुकान छोटी होने के कारण घड़ियों की मरम्मत करने के लिए कोई उसके पास नहीं आता और वहाँ घड़ियों की काफी बड़ी-बड़ी दुकानें होने के कारण उसे घड़ियाँ बेचने का मौका नहीं मिलता। इस समय चमन की जिन्दगी अर्थाभाव से ग्रस्त और दयनीय बन जाती है। उसकी पत्नी उसके साथ मुसीबतें झेलते-झेलते मर जाती है, तब तो यह जिन्दगी उसे और भी भारी लगने लगती है। अपनी दुर्दशा और पत्नी की मौत की व्यथा चमन इस प्रकार व्यक्त करता है ' सोचा था दिल्ली में कुछ हाथ-पैर मारूँगा, पर यहाँ आकर हालत और भी बिगड़ गयी। सतवन्ती तो दिन-दिन भर रोती रहती थी, पर उसने कभी परेशान नहीं किया। जितना ले आता था, उसमें गुजारा कर लेती थी। यहाँ आकर उसकी सेहत बिगड़ती ही गयी। उसके बाद जिन्दगी और भी भारी पड़ रही है।'[१] इस आर्थिक विवशता ने चमन के सुखी जीवन के स्वप्न को तार तार कर दिया दिया है।

' मांस का दरिया ' कहानी की वेश्या जुगनू बीमारी की मार और आर्थिक विपन्नता से ऊब गयी है। टी.बी.जैसी असाध्य बीमारी से घिरी जुगनू मुसीबत और तकलीफ के दिनों में अपना इलाज कराने में भी असमर्थ है तब उफनती जवानी में उसके पास आनेवालों की ओर आसरे की दृष्टि से देखती है। उनसे कुछ रुपये उधार लेकर उसे सेनेटोरियम में दाखिल होना पड़ता है। अर्थतंत्र के शिकंजे में जकड़ी हुई जुगनू दिन-ब-दिन अपने उपर चढ़ते हुये कर्जे से अलग परेशान है। उसकी अनंत तक फैली हुई नरक से बदतर यह जिन्दगी, उसकी आँखों के सामने एक भयावह सपने की तरह खड़ी दिखाई देती है।

इस तरह ये कहानियाँ एक ओर सामान्य व्यक्ति के दुख-दर्द को व्यक्त करती हैं, तो दूसरी ओर उसके समस्त सपनों के राख हो जाने का दर्द भी प्रकट करती है।

---

१ कमलेश्वर - खोयी हुई दिशाएँ - एक रुकी हुई जिन्दगी - पृ.१२४।

शिक्षित बेरोजगारी भी समकालीन जीवन के अर्थाभाव का ही एक शाप है। 'आसक्ति' कहानी में विनोद के माध्यम से देश में शिक्षित व्यक्ति को भी नौकरी न मिल पाने की व्यथा चित्रित हुई है। उसके बेकार होने के कारण उभरी हुई उसकी आर्थिक विवशता, निरुपायता उसे हर समय नैराश्य और खीझ का अहसास कराती है। बहन की आर्थिक कमाई पर जीते-जीते वह स्वयं का आर्थिक, सामाजिक और शायद मानसिक भी अस्तित्व जैसे भूल जाता है। उसकी जिन्दगी में रोज ऐसा एक पल आता, जो उसे दुनिया का इकलौता निकम्मा आदमी होने का अहसास देकर चला जाता था। ऐसे क्षणों में उसके दिमाग में अपनी अर्थहीन जिन्दगी के बारे में हजारों ख्याल आते और जाते है। यह स्थिति विनोद जैसे हर बेकार युवक के मन में एक गहरी निराशा और आक्रोश को जन्म देती है।

इस प्रकार कमलेश्वर जी की महानगरों से संबंधित कहानियों में सामान्य व्यक्ति के अर्थाभावों का अत्यंत प्रामाणिक चित्रण प्राप्त होता है। आर्थिक विवशताओं से भरी हुई यह जिन्दगी लेखक ने अत्यंत नजदीक से देखी है और इसीलिए वह यथार्थ भी है।

कमलेश्वर की सभी कहानियों को पढने के पश्चात महानगरीय जीवन का अच्छा अन्दाज लगता है, परंतु महानगरीय जीवन का एक पक्ष वह है, जो हमें झोपड्यिों में रहने वालों और फूटपाथोंपर सोनेवालों में दिखाई देता है। कमलेश्वर जी की कोई भी कहानी महानगर में रहनेवाले इन लोगों के जीवनपर प्रकाश नही डालती।